# परम पावन तीर्थक्षेत्र श्री हस्तिनापुर जी

परम पावन तीर्थ हस्तिनापुर जैन धर्मावलम्बियों की आस्था का प्रमुख केन्द्र है। उत्तरी भारत का सबसे बड़ा तीर्थ अनेक तीर्थंकरो की चरण रज से पवित्र यह तीर्थ जहाँ तीन तीर्थंकरों के 12 कल्याणक हुए एवं अनेक ध ार्मिक घटनायें घटित हुईं।

जैन पौराणिक परम्परा के अनुसार अयोध्या और हस्तिनापुर की रचना देवताओं द्वारा की गयी थी। हस्तिनापुर वही स्थान है, जहां भगवान आदिनाथ को प्रथम आहार मिला था जो दान धर्म का प्रवर्तक है। यह वही नगरी है जहां सात सौ मुनियों की रक्षा विष्णु कुमार महामुनि ने की थी। जैन हरिवंश पुराण और महाभारत के अनुसार यह कौरव व पाण्डवों की क्रीड़ा स्थली रही है। राजा दुष्यन्त यहीं राज्य करते थे। यहां राजा हरसुखराय ने विशाल मन्दिर का निर्माण कराया। यहां परम पूज्य गणिनी प्रमुख आर्यिका ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा से जम्बूद्वीप की विशाल रचना ने आकार लिया। यहां कैलाश पर्वत एवं नंदीश्वर द्वीप की मनोहारी रचना की गयी है। यहां आचार्य श्री धर्मभूषण जी महाराज ने शांतिवन की स्थापना की। यहां हजारों श्रद्धालुजन आकर अपने कर्मों की निर्जरा करते हैं और अपने कल्याण का मार्ग प्रशस्त करते हैं।

**दान तीर्थ का प्रवर्तक हस्तिनापुर-**

हस्तिनापुर में सर्वविश्रुत घटना भगवान ऋषभदेव के लिए राजकुमार श्रेयांस कुमार द्वारा दिये गये आहार-दान की घटित हुई, जिसने सारे जगत का ध्यान इस नगर की ओर आकर्षित कर दिया। भगवान ऋषभदेव मुनि-दीक्षा लेने के पश्चात् छह माह के उपवास की प्रतिज्ञा लेकर ध्यान में लीन हो गये। अपने व्रत की समाप्ति के पश्चात् वे आहार के लिए निकले। किन्तु मुनिजनोचित आहार-विधि का ज्ञान न होने के कारण कोई उन्हें आहार नहीं दे सका। इस प्रकार भगवान को 6 माह 13 दिन तक और निराहार रहना पड़ा। जब भगवान प्रयाग से विहार करते हुए हस्तिनापुर पधारे तो बाहुबली के पुत्र हस्तिनापुर-नरेश सोमप्रभ के लघुभ्राता श्रेयान्स ने उन्हें अपने महल की छत से देखा। देखते ही

उन्हें पूर्वजन्म में दिए हुए आहार-दान की विधि का स्मरण हो आया। वह नीचे आये और भगवान को भक्तिपूर्वक पड़गाहा और महलों में ले जाकर उन्हें इक्षु रस का शुद्ध आहार दिया। यह पुण्य दिवस बैशाख शुक्ला तृतीया था। भगवान के इस सर्वप्रथम आहार के कारण हस्तिनापुर को महानता प्राप्त हो गयी। यह पवित्र दिन **अक्षय तृतीया** के नाम से एक पर्व के रूप में प्रसिद्ध हो गया।

सोमप्रभ और श्रेयांस दोनों बाहुबली के पुत्र थे। भगवान ऋषभदेव ने जब अपने सौ पुत्रों को

राज्य दिये तो बाहुबली को पोदनपुर और हस्तिनापुर के राज्य मिले। पोदनपुर में वे स्वयं रहे और हस्तिनापुर में उनका पुत्र सोमप्रभ या सोमयश। इसी से चन्द्रवंश चला। इसका दूसरा नाम कुरू भी था। कुरूवंश भी इसी के कारण प्रख्यात हुआ। इक्षु रस का आहार लेने के कारण भगवान इक्ष्वाकु कहलाये और उनका वंश इक्ष्वाकु वंश।

**तीर्थंकर शान्तिनाथ, कुन्थुनाथ और अरहनाथ की बारह कल्याणक भूमि हस्तिनापुर**

हस्तिनापुर वह सौभाग्यशालिनी नगरी है जहां के नगरवासियों को तीर्थंकर शान्तिनाथ, कुन्थुनाथ और अरहनाथ भगवान के पंच कल्याणक मनाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। विशेष बात यह है कि ये तीनों तीर्थंकर होने के साथ पांचवे, छटवें और सातवें (बारह चक्रवर्तियों में) चक्रवर्ती भी थे, ये तीनों कामदेव भी थे। तीनों ने भरत क्षेत्र के छः खण्डों पर विजय प्राप्त कर एक छत्र साम्राज्य की स्थापना की थी और हस्तिनापुर को समस्त भरत क्षेत्र का राजनैतिक केन्द्र बनाया था।

हस्तिनापुर के आस-पास इन तीर्थंकरों ने तप कर कर्मों की निर्जरा की थी। अतः अनेक स्थानों पर उनकी निशीथिकायें (निशियां, चरण छतरी या चरण चिन्ह) बनायी गयी जिनमें कुछ आज भी मौजूद हैं। तीर्थंकर ध र्मनाथ और शांतिनाथ के अन्तराल में चौथे चक्रवर्ती सनत कुमार ने हस्तिनापुर को अपनी राजधानी बनाया था।

**रक्षाबन्धन पर्व का जनक हस्तिनापुर-**

रक्षाबन्धन पर्व हस्तिनापुर नगरी से ही प्रारम्भ हुआ जो आज भी बड़ी श्रद्धापूर्वक एवं धूमधाम से मनाया जाता है। वस्तुतः श्रावण शुक्ला पूर्णिमा को विष्णु कुमार महामुनि ने हस्तिनापुर नगरी में सात सौ मुनियों का उपसर्ग दूर कर बलि राजा आदि से सात सौ मुनियों की रक्षा की थी।

आज भी धार्मिक, लौकिक पर्व तथा वात्सल्य पर्व के रूप में रक्षाबंधन पर्व बड़े उत्साह से मनाया जाता है। वात्सल्य पर्व के रूप में जहां मन्दिरों में राखी बांधी जाती है वहीं मुनियों आदि के लिए रक्षा का संकल्प लिया जाता है और हस्तिनापुर को स्मरण किया जाता है। लौकिक पर्व के रूप में बहन-भाई को रक्षा सूत्र (राखी) बांधती है। क्षेत्रानुसार इस पर्व के अनेक रूप प्रचलित हैं।

हस्तिनापुर से जुड़ी और भी अनेक कथायें/घटनायें हैं जिन्हें अति संक्षेप में यहां दिया जा रहा है।

1. भगवान मुनिसुव्रतनाथ के समय हस्तिनापुर (नागपुर) का राजा बहुवाहन था। उसकी पुत्री का नाम मनोहरा था, जिसका विवाह साकेतपुरी के राजा विजय के पुत्र वज्रबाहु के साथ हुआ था। विवाह के बाद जब वह अपनी पत्नी को लेकर जा रहा था तब बसन्तगिरि पर एक ध्यानस्थ मुनि को देखा और उनका उपदेश सुना। उपदेश सुनकर उसे वैराग्य हुआ और 26 राजकुमारों के साथ मुनि दीक्षा ग्रहण कर अपने कल्याण का मार्ग प्रशस्त किया।

2. तीर्थंकर मुनिसुव्रतनाथ के ही समय में हस्तिनापुर में गंगदत्त श्रेष्ठी रहता था उसके पास सात करोड़ सोने की मुद्रायें थीं। भगवान जब हस्तिनापुर पधारे तब उनका उपदेश सुन उस सेठ को वैराग्य उमड़ा और उसने जिन दीक्षा ग्रहण कर ली।

इस प्रकार स्पष्ट है कि तीर्थंकर मुनिसुव्रतनाथ का विहार हस्तिनापुर नगरी में हुआ था।

**कौरव पाण्डवों की क्रीड़ास्थली हस्तिनापुर-**

महाभारत के अनुसार कौरव-पाण्डवों की क्रीड़ास्थली और कौरवों की राजधानी के रूप में हस्तिनापुर विश्वविख्यात रहा है। उस

समय इसका वैभव चरम उत्कर्ष पर था।

कहा जाता है कि महाभारत के समय हस्तिनापुर राज्य की उत्तरी सीमा शुक्रताल (जिला मुजफ्फरनगर) दक्षिणी सीमा पुष्पवटी (=पूठ, जिला बुलन्दशहर) पश्चिमी सीमा वारणावत (=बरवाना, जिला मेरठ) तक थी। पूर्व की ओर गंगा प्रवाहित होती थी। मेरठ या मयराष्ट्र इसकी सीमा में था। वर्तमान मवाना (मुहाना) इसका प्रवेश द्वार था। महाभारत (आदि पर्व 125, 9) में हस्तिनापुर के वर्धमान नामक पुरद्वार का उल्लेख है जो तीर्थंकर महावीर का नाम है। पांडु की मृत्यु के पश्चात् शतश्रृंग से हस्तिनापुर आते समय कुंती अपने पुत्रों सहित इसी द्वार से राजधानी में प्रविष्ट हुई थी।

पाण्डवों के बाद कुछ समय तक यहां नागजाति का आधिपत्य हो गया। अर्जुन के पौत्र परीक्षित की मृत्यु इन्हीं नागों के हाथों हुई थी। तक्षशिला इनका प्रधान केन्द्र था। तक्षक इनका प्रधान था।

नागजाति का अपना जातीय चिन्ह 'नाग' था। मथुरा आदि कई स्थानों पर सिक्के प्राप्त हुए हैं, जिनमें नाग नामान्तक कुछ राजाओं का परिचय मिलता है। भारशिव नरेश पद्मावती के नागवंश के थे। तीसरी-चौथी शताब्दी में इनका विस्तृत प्रदेश पर आधिपत्य था। तीर्थंकरों की मूर्तियों के दायें-बायें बहुधा फणधारी नाग लोग खड़े पाये जाते हैं। इससे यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि नाग लोग जैन धर्म के अनुयायी रहे हैं। इन्हें वैदिक स्मृतियों में वेद-विरोधी व्रात्य कहा गया है।

परीक्षित की पाँचवी पीढ़ी में अधिसीम कृष्ण का पुत्र निचक्षु हुआ। इसके राज्य-काल में लाल टिड्डियों का भयानक प्रकोप हुआ, जिन्होंने सारी फसल को चट कर डाला। पेड़ों पर पत्ते तक न रहे। भीषण अकाल पड़ा। तभी गंगा में भी भीषण बाढ़ आ गयी। उससे हस्तिनापुर का विनाश हो गया। इसके बाद गंगा इस नगर से पूर्व की ओर कई मील खिसक गयी। इससे नगर को जल मिलना भी दुर्लभ हो गया। फलतः निचक्षु ने यहां से अपनी राजधानी हटाकर प्रयाग के निकट कौशाम्बी में बनायी। यह हस्तिनापुर नगर का प्रथम विनाश था।

इसके पश्चात् यह नगर फिर बसा। किन्तु कुरूवंश के स्थान पर इस पर नाग जाति का आधिपत्य हो गया। सम्भवतः नाग जाति के आधिपत्य काल में ही भगवान पार्श्वनाथ का समवशरण यहां आया था। भगवान महावीर का भी समवशरण यहां आया और भगवान के दिव्य उपदेशों को सुनकर वहां के राजा शिवराज ने जैन धर्म स्वीकार कर लिया था। भगवान की स्मृति में यहां एक स्तूप का भी निर्माण किया गया था। यह बस्ती ईसा पूर्व 300 तक आबाद रही। फिर किसी भीषण अग्निकाण्ड के कारण नष्ट हो गयी। उसके बाद अनेक बार यह नगर बसा और उजड़ा।

**जैन मन्दिर-निर्माण-**

कई राजनीतिक और प्राकृतिक कारणों से हस्तिनापुर मध्यकाल के पश्चात् शताब्दियों तक उपेक्षित सा रहा। इसी उपेक्षा के परिणामस्वरूप लगता है, यहां के प्राचीन मन्दिर और निशथिकाएँ नष्ट हो गयीं। किन्तु तीर्थ स्थान तो यह बराबर बना रहा और भक्त लोग यात्रा के लिए आते रहे। 18-19वीं शताब्दी में यहाँ मन्दिर और निशियों की हालत बड़ी जीर्ण-शीर्ण थी। सभी लोगों की इच्छा थी कि यहाँ मन्दिर अवश्य बनना चाहिए। लोगों की प्रार्थना पर सं. 1858 (सन् 1801) ज्येष्ठ बदी 13 के मेले में दिल्ली निवासी राजा हरसुखराय, जो मुगल बादशाह शाह आलम के खजांची थे, ने मन्दिर निर्माण के लिए अपनी स्वीकृति दे दी। यह इलाका उस समय बहसूमे के गूजर नरेश नैनसिंह के अधीन था। शाहपुर के

गूजर यहाँ जैन मन्दिर निर्माण के अकारण विरोधी थे। राजा नैनसिंह के एक मित्र शाहपुर निवासी लाला जयकुमारमल थे। राजा हरसुखराय ने उनसे अनुरोध किया कि आप राजा नैनसिंह से कहकर यह कार्य करा दीजिए। उसी रात को लाला जी ने राजा साहब से इसकी चर्चा की और कहा कि 'राजा हरसुखराय ने इसके लिए भरी पंचायत में अपनी पगड़ी सबके समक्ष उतारकर रख दी है।' राजा नैनसिंह राजा हरसुखराय के भी बड़े कृतज्ञ थे क्योंकि वे एक बार शाही खजाने के कर्ज के एक लाख रुपये समय पर अदा नहीं कर सके थे, जिसको राजा हरसुखराय ने स्वयं अदा किया था। बस, उन्होंने मन्दिर-निर्माण का शिलान्यास भी अपने हाथों से करना स्वीकार कर लिया।

दूसरे दिन राजा हरसुखराय, लाला जयकुमारमल और सैकड़ों जैनाजैन व्यक्तियों की उपस्थिति में राजा नैन सिंह ने धरातल से चालीस फुट ऊँचे टीले पर दिगम्बर जैन मन्दिर की नींव में अपने हाथों से पाँच ईटें रखीं। इसके बाद राजा हरसुखराय के धन से लाला जयकुमारमल की देख-रेख में पाँच वर्ष में विशाल शिखरबन्द दिगम्बर जैन मन्दिर का निर्माण हुआ। कहते हैं, जब कलशारोहण और वेदी-प्रतिष्ठा का अवसर आया तो राजा हरसुखराय ने पंचायत से प्रार्थना की- 'पंच सरदारों! मेरी जितनी शक्ति थी, मैंने उतना कर दिया। मन्दिर आप सबका है। अत: आप लोग भी इसके लिए सहायता करें।' उस समय जो लोग वहाँ उपस्थित थे, उनके सामने एक घड़ा रखा गया और सबने अपनी-अपनी शक्ति के अनुसार उस घड़े में दान डाला। किन्तु फिर भी यह राशि अत्यन्त अल्प थी। मन्दिर के निमित्त सभी जैन भाईयों से इस तरह रुपया एकत्रित करने में राजा साहब का उद्देश्य मन्दिर को सार्वजनिक बनाना और अपने को अहंभाव से दूर रखना था।

तत्पश्चात् संवत् 1863 (1806 ई.) में कलशारोहण और वेदी-प्रतिष्ठा का कार्य राजा साहब ने समारोहपूर्वक कराया। उस समय मन्दिर में देहली से लायी हुई भगवान पार्श्वनाथ की बिना फणवाली प्रतिमा विराजमान की गयी। वि.सं. 1897 (1840 ई.) में लाला जयकुमारमल ने मन्दिर का विशाल सिंहद्वार बनवाया।

इस मन्दिर के चारों ओर धर्मशाला बनी है। मन्दिर के बाहर भी कई दिगम्बर जैन धर्मशालाएँ बनी हुई हैं। मन्दिर में बहुत-सा काम राजा हरसुखराय के पुत्र राजा सुगनचन्द ने कराया था।

सन् 1857 के गदर के समय गूजर लोगों ने इस मन्दिर को लूट लिया। वे लोग मूलनायक प्रतिमा को भी उठाकर ले गये। फलत: दिल्ली, धर्मपुरा के नये मन्दिर से वि. संवत् 1548 में भट्टारक जिनचन्द्र द्वारा प्रतिष्ठित भगवान शान्तिनाथ की मूर्ति यहाँ लाकर मूलनायक के रूप में विराजमान की गयी। तब से यह मन्दिर शान्तिनाथ मन्दिर कहा जाने लगा। गदर के बाद भी एक बार फिर लुटेरों ने मन्दिर को लूटा। यह मन्दिर उस केन्द्रीय टीले पर बनाया गया था, जहाँ सम्भवत: पहले भी कोई जैन मन्दिर था।

**हस्तिनापुर-वर्तमान स्थिति-**

वर्तमान हस्तिनापुर उत्तर प्रदेश के मेरठ जिले में मेरठ से 35 किलोमीटर एवं दिल्ली से लगभग 100 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। सड़क पर प्रवेश करते ही दायें हाथ की ओर श्वेताम्बर जैन मन्दिर और बायें हाथ की ओर दिगम्बर जैन (बड़ा मन्दिर) बना है। थोड़े आगे चलने पर कैलाश पर्वत की रचना ने आकार लिया है। लगभग आध ा किलोमीटर चलने पर पूज्य गणिनी प्रमुख आर्यिका ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा से निर्मित विशाल जम्बूद्वीप परिसर है। लगभग 2 किमी. चलने पर प्रथम निशियाँ जी है, जिसे अब शान्तिवन कहा

जाने लगा है। 2-3 किलोमीटर के अन्तराल के बाद दूसरी, तीसरी और चौथी निशियाँ हैं।

बड़े मन्दिर में प्रवेश द्वार के समीप दायीं ओर क्षुल्लक मनोहर लाल जी वर्णी, सहजानन्द (वर्णी जी महाराज) के साहित्य का विक्रय केन्द्र है। बायीं ओर क्षेत्र का कार्यालय है। आगे बायीं ओर सर्व सुविधा सम्पन्न विशाल धर्मशाला है और दायीं ओर स्वागत कक्ष। द्वार के अन्दर प्रवेश करने पर सामने भगवान शान्तिनाथ मन्दिर और दायें अम्बिका देवी मन्दिर पार्श्वनाथ मन्दिर नंदीश्वर द्वीप आदि गोलाई में हैं। तत्पश्चात नेमिनाथ अरहनाथ, भगवान ऋषभदेव मन्दिर, त्रिमूर्ति मन्दिर, भव्य समवशरण, कुन्थुनाथ मन्दिर, महावीर जिनालय व चन्द्रप्रभु जिनालय है। भव्य मानस्तम्भ बाहुबली जलमय व 3131 फुट उत्तुंग भगवान शान्तिनाथ मन्दिर है। पूरे क्षेत्र (बड़ा मन्दिर जी के अधीन) की धर्मशालाओं में लगभग 300 कमरे, 3 बड़े हाल, एक गेस्ट हाऊस है। एक साथ 2500 यात्री यहाँ ठहर सकते हैं। क्षेत्र पर भोजनालय, औषधालय और पुस्तकालय की सुविधा है। पहुँचने का सरल मार्ग मेरठ से सड़क द्वारा 35 किलोमीटर है। निकटवर्ती हवाई अड्डा दिल्ली (110 कि.मी.) है। क्षेत्र के फोन नं. 01233-280133, 280188, 280999 (कैलाश पर्वत) हैं। वर्तमान अध्यक्ष श्री त्रिलोक चंद जैन दिल्ली तथा महामंत्री श्री मुकेश जैन सर्राफ, मेरठ हैं। किसी भी जानकारी के लिए प्रबन्धक श्री मुकेश कुमार जैन (मो: 09412551909) से सम्पर्क किया जा सकता है।

## जम्बूद्वीप एवं उसका परिसर

हस्तिनापुर के आधुनिक स्वर्णिम इतिहास का दूसरा चरण परमपूज्य वर्तमान गणिनी प्रमुख आर्यिका ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा से स्थापित/विकसित जम्बूद्वीप एवं उसके परिसर से होता है।

कर्नाटक, महाराष्ट्र, गुजरात, बिहार, बंगाल, राजस्थान, मध्यप्रदेश, दिल्ली आदि प्रांतों में विहार करने के बाद सन् 1974 में पूज्य आर्यिका श्री का ससंघ पदार्पण हस्तिनापुर तीर्थ पर हुआ। बस तभी से हस्तिनापुर ने नये इतिहास की रचना प्रारम्भ कर दी।

250 फुट के व्यास में सफेद और रंगीन संगमरमर पाषाणों से निर्मित जैन भूगोल के अद्वितीय रचना वृत्ताकार जम्बूद्वीप का निर्माण हुआ है, जिसके बीचों बीच में हल्के गुलाबी संगमरमर के 101 फुट ऊँचे सुमेरू पर्वत की शोभा सभी के मन को आकर्षित करती है।

सन् 1985 से राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय आकर्षण केन्द्र के रूप में उभरे प्राचीन जैन साहित्य एवं भूगोल के परिचायक, वैज्ञानिकों के लिए शोध केन्द्र, आध्यात्मिक उन्नयन के लिए पवित्र स्थान, मानसिक शांति एवं जिनेन्द्र भगवान की पूजन-भक्ति के सम्पूर्ण साधनों तथा आधुनिक सुविधाओं की उपलब्धता सहित इस अनुपम तीर्थ की जनक संस्था का नाम है-

**दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान ( रजि. )**

ईस्वी सन् 1972 में पूज्य गणिनी प्रमुख आर्यिका शिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा से स्थापित उक्त संस्था के द्वारा जम्बूद्वीप रचना के निर्माण हेतु ऐतिहासिक तीर्थ हस्तिनापुर में नशिया मार्ग पर जुलाई, 1974 में एक छोटी-सी भूमि क्रय की गई, जहाँ सर्वप्रथम 24वें तीर्थंकर भगवान महावीर स्वामी की अवगाहना प्रमाण सात हाथ (सवा दस फुट) ऊँची खड्गासन प्रतिमा विराजमान करने हेतु फरवरी 1975 में एक लघुकाय जिनालय का निर्माण किया गया जो सन् 1990 में एक अनोखे 'कमल मन्दिर' के रूप में निर्मित हुआ है। यहाँ विराजमान कल्पवृक्ष भगवान महावीर के अतिशय से क्षेत्र निरंतर प्रगति पथ पर अग्रसर होता हुआ नित्य नये निर्माणों के द्वारा संसार में अद्वितीय पर्यटन स्थल के रूप में प्रसिद्ध हुआ है।

जुलाई, 1974 में रखी गई नींव के आधार पर जम्बूद्वीप के बीचोंबीच में सर्वप्रथम आगमवर्णित सुमेरू पर्वत (101 फुट ऊँचा) का निर्माण अप्रैल सन् 1979 में पूर्ण हुआ। सोलह जिनमन्दिरों से समन्वित उस सुमेरू पर्वत में अन्दर से निर्मित 136 सीढ़ियों से चढ़कर श्रद्धालुभक्त समस्त भगवन्तों के दर्शन करके जब सबसे ऊपर पाण्डुकशिला के निकट पहुँचते हैं तो नीचे जम्बूद्वीप रचना के सभी नदी, पर्वत, मन्दिर, उपवन आदि दृश्यों के साथ-साथ हस्तिनापुर के आसपास के सुदूरवर्ती ग्रामों का भी प्राकृतिक सौन्दर्य देखकर फूले नहीं समाते हैं।

जैन एवं वैदिक ग्रंथों के अनुसार यह सुमेरू पर्वत तीनों लोकों एवं तीनों कालों में सबसे पवित्र तथा ऊँचा पर्वत माना जाता है, इसी पर्वत पर समस्त जैन तीर्थंकरों के जन्माभिषेक का वर्णन जैन शास्त्रों में मिलता है। 1 लाख 40 योजन अर्थात् 40 करोड़ मील (60 करोड़ किमी. ) की ऊँचाई वाले उस अकृत्रिम सुमेरू पर्वत को विश्व में प्रथम बार हस्तिनापु में 101 फुट ऊँची प्रतिकृति के रूप में निर्मित किया गया है।

**अद्वितीय रचनाः तेरहद्वीप जिनालय-**

जम्बूद्वीप तीर्थ पर अनूठी कृतियों का संगम अद्भुत प्रस्तुति के साथ अति विशिष्ट जिनमन्दिरों के रूप में देखा जा सकता है। इन्हीं में एक है- तेरहद्वीप जिनालय।

जैन भूगोल के लगभग समग्र स्वरूप को प्रदर्शित करने वाली इस रचना का निर्माण होना पूज्य गणिनी श्री ज्ञानमती माताजी का एक दिव्य स्वप्न था, जो 27 अप्रैल से 2 मई 2007 के मध्य सम्पन्न हुए भव्य पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सवपूर्वक साकार हुआ। इस रचना में भक्तों को मध्यलोक में स्थित 13 द्वीप के 458 अकृत्रिम जिनमन्दिर, पंचमेरू पर्वत, 170 समवशरण, अनेक देवभवन आदि में विराजमान 2127 जिनप्रतिमाओं के दर्शन होते हैं। साथ ही विभिन्न सागर, नदी, पर्वत, भोगभूमि, कल्पवृक्ष आदि की अवस्थिति के संदर्भ में भी जानकारी प्राप्त होती है।

**जम्बूद्वीप तीर्थ पर निर्मित तीनलोक रचना-**

जम्बूद्वीप तीर्थ पर विश्व में प्रथम बार निर्मित एक और रचना है, जिसे 'तीनलोक' कहा जाता है। इस रचना में जैनधर्म के अनुसार अधोलोक, मध्यलोक एवं ऊर्ध्वलोक की अवस्थिति प्रदर्शित की गई है, जिसमें अधोलोक में भवनवासी, व्यंतर आदि देवों के भवन, जिनमन्दिर तथा 7 नरक व वहाँ उपस्थित नारकियों की दशा, मध्यलोक में पंचमेरू पर्वत आदि तथा ऊर्ध्वलोक में 16 स्वर्ग व स्वर्ग में रहने वाले देवों का ऐश्वर्य, भव्य जिनमन्दिर, नवग्रैवेयक, नवअनुदिश, पंच अनुत्तर व सबसे ऊपर सिद्धशिला आदि प्रदर्शित किये गये हैं। इस रचना में विराजमान की गई समस्त प्रतिमाएं पंचकल्याणकपूर्वक प्रतिष्ठित हैं। 'अच्छे कार्यों से शुभ फलस्वरूप स्वर्ग व मोक्ष का वैभव एवं बुरे कार्यों के अशुभ फलस्वरूप नरक की वेदना', इस रचना के दर्शन से प्रत्येक जनमानस को यही संदेश प्राप्त होता है।